भारतीय परिवार-बोध और रामचरितमानस

डॉ मोनिका शर्मा

भारतीय संस्कृति में सदा से ही पारिवारिक जुड़ाव का भाव बहुत गहनता से समाहित रहा है। यही कारण है कि सामाजिक रीति-नीति और आत्मीय सम्बन्धों के निजी लगाव में तो यह लगाव दिखता ही है, आध्यात्मिक ग्रन्थों में भी इस भावबोध को प्रमुखता से चित्रित किया गया है। श्रीरामचरितमानस भी यों तो रामकथा है पर परिजनों के जुड़ाव से लेकर मनोमालिन्य तक, बहुत से संवेदनासिक्त उद्‌गार, विचार और व्यवहार से जुड़े पक्षों को इसमें उकेरा गया है। जैसा कि ख्यात आलोचक डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' में लिखा है -

"तुलसी की पहुँच घर-घर में है, या वे व्यापक समाज में सर्वाधिक लोकप्रिय हैं तो इसका मुख्य कारण यह है कि गृहस्थ जीवन और आत्म-निवेदन इन दोनों अनुभव-क्षेत्रों के वे बड़े कवि हैं। 'रामचरितमानस' और 'विनयपत्रिका' के युग्म में जैसे सब कुछ सिमट आया हो। गृहस्थ-जीवन यों तो वर्णनात्मक काव्य-मात्र में होगा। पर यह चित्रण संदर्भ और परिवेश के रूप में भी हो सकता है, और स्वयं रचना के केन्द्र में भी हो सकता है। हिंदी का कवि प्रायः दूसरे रूप को चुनता है। तुलसी इस बिरादरी के मुखिया हैं।"

जीवन-दर्शन को समेटे हुए रामचरितमानस में व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और राजनैतिक जीवन के हर पक्ष के लिए आदर्श स्थापित किया गया है। मानस के पन्नों पर भाई-भाई के सम्बन्धों की मर्मस्पर्शी भावभूमि भी उपस्थित है और स्त्रीमन का स्नेहसिक्त असंतोष भी। भारतीय संस्कृति के विभिन्न रंगों के वाहक इस महाकाव्य में मानव धर्म की आचार संहिता उल्लिखित है। स्पष्ट दिखता है कि श्रीरामचरितमानस की चौपाइयों में जीवन के व्यावहारिक बंधनों और आशाओं के अधिकतर रंग सम्मिलित हुए हैं। इस भाव-चाव को जिस कोण से भी देखा-समझा जाय पारिवारिक जीवन को साधने और थामने की सोच का सिरा हमारे हाथ में होता है।

पितृ धर्म, मातृ धर्म, भ्रातृ धर्म, पुत्र धर्म, पति धर्म, पत्नी धर्म के साथ-साथ गुरु, शिष्य, सखा और शत्रु धर्म को भी तुलसीदास की रामचरितमानस में वर्णित-व्याख्यायित किया गया है। इतना ही नहीं, समाज के हर वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली मानस की चौपाइयों में सामाजिक जीवन के लिए भी एक नियमावली है। चूंकि, परिवार को समाज की इकाई कहा जाता है, इन दिशानिर्देशों को जानने-समझने पर भी कहीं न कहीं परिवार बोध का दृढ़ धरातल ही हमारे समक्ष होता ही है। मानव मन की संवेदनाओं के हर मोर्चे पर भगवान राम का परिवार के प्रति अटूट प्रेम और समर्पण पारिवारिक प्रतिबद्‌धता को ही सामने रखता है।

मानस में वर्णित भातृ-प्रेम विशिष्ट है। बाल्यकाल से ही भाइयों में परस्पर प्रेम है और इस प्रेम की धुरी श्रीराम हैं। गोस्वामी जी ने लिखा है -

बारेहि ते निज हित पति जानी। लछिमन राम चरन रति मानी॥

भरत सत्रुहन दूनउ भाई। प्रभु सेवक जसि प्रीति बड़ाई॥

यह प्रेम राम वनगमन के प्रसंग में अपनी पूरी तीव्रता के साथ प्रकट होता है। वनगमन के प्रसंग में लक्ष्मण जब अपनी माता सुमित्रा से श्रीराम के साथ वन जाने की आज्ञा मागने जाते हैं, तब उनके मन में भय है कि यदि माता ने आज्ञा नहीं दी तो भैया उन्हें साथ नहीं ले जाएंगे। परंतु, आज्ञा माँगने पर रानी सुमित्रा की जो प्रतिक्रिया होती है, वो परिवार-जीवन का उत्कृष्ट आदर्श प्रस्तुत करती है। वे कहती हैं -

तुम्हरेहिं भाग रामु बन जाहीं। दूसर हेतु तात कछु नाहीं॥

सकल सुकृत कर बड़ फलु एहू। राम सीय पद सहज सनेहू॥

आज्ञा देने की बात तो पीछे रह जाती है, सुमित्रा तो इसे लक्ष्मण का भाग्य मानती हैं कि उन्हें राम-सीता यानी भैया-भाभी के साथ वन में जाकर उनकी सेवा का अवसर मिल रहा है। वे उन्हें राम-सीता की हर प्रकार से सेवा करने का उपदेश देकर विदा करती हैं। सोचकर देखिए कि परिवार-जीवन का कितना ऊँचा आदर्श इस प्रसंग में प्रकट हुआ है!

वस्तुतः, मानस के किसी विशेष अंश को लिया जाए या चौपाई को, साथ-स्नेह और अपनेपन को पोसता विचार ही हमारे समक्ष होता है। साझे जीवन को बल देने वाला मत मन का द्वार खटखटाने लगता है। यही कारण है कि आज भी रामचरितमानस में सँजोये भावपूर्ण शब्दों के माध्यम से मिलने वाली हर सीख की प्रासंगिकता बनी हुई है।

श्रीरामचरितमानस के नायक श्रीराम को तो मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में दर्शाया गया है। उनके व्यक्तित्व में समाहित हर बात, हर विचार सामाजिक चेतना को बल देने वाला है। समझना कठिन नहीं कि परिवार बोध की सोच आदर्श परिवार की रूपरेखा को बल देती है। जो अन्ततः सामाजिक परिवेश के परिष्करण से जुड़ती है। मर्यादा का मान किए बिना इनमें से किसी भी मोर्चे पर जीवन की सार्थकता सिद्ध नहीं की जा सकती।

नीति संगत जीवन और सदाचार प्रभु राम के व्यक्तित्व का अटूट हिस्सा रहे हैं। जो मानवीय मूल्यों के मोर्चे पर समग्र संसार को दिशा दिखाने वाले रहे हैं और वर्तमान में भी इनकी प्रासंगिकता बनी हुई है। बिखरते मानवीय मूल्यों की चिंता करते आज के समाज में सार्थक सोच को विस्तार देना आवश्यक है। सोच-समझ की सकारात्मकता ही कर्तव्य-बोध का मार्ग प्रशस्त करती है। बात कहीं ना कहीं चिंतन की दिशा से जुड़ी प्रतीत होती है। सुमति और कुमति जीवन को साधने या दिशाहीन करने का कारण बन सकते हैं। यह दिशाहीनता पारिवारिक सम्बन्धों से लेकर सामाजिक परिवेश तक, सब कुछ भ्रमित आभामंडल की ओर ले जाती है। ऐसे में सही ही लगता है कि -

'सुमति कुमति सब कें उर रहहीं।

नाथ पुरान निगम अस कहहीं॥

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना।

जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना॥'

ध्यातव्य है कि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस मात्र आध्यात्मिक पक्ष को सम्बोधित नहीं करती। भक्ति मार्ग के साधकों के जुड़ाव को भी सार्थक दिशा देने के साथ ही सामाजिक एवं व्यावहारिक भाव-चाव व राजनैतिक सम्बन्धों के चुनाव को भी मार्गदर्शन देती है। समग्र रूप से लोकमंगल की कामना का भाव मानस के शब्दों की सरिता से बहता है। इनमें आक्रामकता के स्थान पर वैचारिक समझ से उलझनों को सुलझाने वाला पाठ भी समाहित है और सम्बन्धों के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर देने का मानवीय पराक्रम भी।

पारिवारिक जीवन में सम्बन्धों की मर्यादा और सामाजिक जीवन में नियमों के निर्वहन की गरिमा, किसी ना किसी संदर्भ में श्रीरामचरितमानस के हर पृष्ठ पर अंकित है। देश और समाज के विभिन्न वर्गों का जुड़ाव भी मर्यादित व्यवहार की पृष्ठभूमि पर टिका होता है, जो राजकीय काम-काज एवं राजा के कर्तव्य-निर्वहन में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। मनुष्य रूप में अवतरित मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्श जीवन का चित्रण जनसाधारण के लिए अनुकरणीय है। दैनिक व्यवहार के आचरण से लेकर सब कुछ पारिवारिक और सामाजिक मानव-मन को नयी दृष्टि दे सकते हैं। भक्ति, साहित्य और दर्शन को समेटे रामायण के पन्नों पर वास्तव में सहज-सधे मानवीय मन-जीवन का ही व्यापक चित्रण किया गया है, जिसमें प्रजा जन इतने सहज हैं कि राम उनके लिए घर के व्यक्ति जैसे हैं और उनके प्रति राम का व्यवहार भी वैसा ही है। चित्रकूट में जब भारत के साथ पहुँचे प्रजाजन से मिलते श्रीराम के चरित्र से यही भाव प्रकट होता है। गोस्वामी जी ने लिखा है -

आरत लोग राम सबु जाना। करुनाकर सुजान भगवाना॥

जो जेहि भायँ रहा अभिलाषी। तेहि तेहि कै तसि तसि रुख राखी॥

अर्थात् श्रीराम सभी प्रजाजनों से उनकी रुचि और इच्छा के अनुसार मिले। आशय यह है कि यहाँ मिलने की औपचारिकता नहीं पूरी की गई, अपितु परिवारजनों की भाँति प्रजाजनों से भी मिला गया। ठीक ऐसा ही प्रसंग श्रीराम के वन से वापस आने पर भी होता है। समझा जा सकता है कि श्रीरामचारितमानस में उपस्थित परिवार-बोध कितना विस्तृत और व्यापक है।

हमारे परिवेश में होने घटित होने वाली सुखद या दुखद घटनाओं से लेकर त्योहारी संस्कृति के मेल-मिलाप तक, स्पष्ट दिखता है कि पारिवारिक चेतना ही दायित्वबोध की पृष्ठभूमि बनाती है। अपने आँगन और अपनों के बीच पढ़ा उत्तरदायित्व का पाठ सामाजिक से लेकर कार्यक्षेत्र तक साथ साथ चलता है। देखा जाय तो आज हर ओर दायित्व निर्वहन की सोच ही तो नदारद है। लोक-संस्कृति तथा जीवन-मूल्यों को मनोवैज्ञानिक भाव-चाव से जोड़ते श्रीरामचरितमानस में समाया मानवीय विमर्श हर भूमिका में अपनी

जवाबदेही लेने की सोच का पोसक है। न कोई बड़ा न कोई छोटा। स्त्री-पुरुष, वृद्ध-युवा धनी -निर्धन, शिक्षित-अशिक्षित, गृहस्थ-संन्यासी या राजा-प्रजा। किसी भी भेदभाव से परे भगवान श्रीराम स्वयं के लिए भी अनुशासन और सधे व्यवहार की एक सीमारेखा खींचते हैं। यह समग्र समाज में चेतना जगाने वाला पक्ष है। ध्यातव्य है कि इस यात्रा का सूत्रपात भले ही व्यक्तिगत सम्बन्धों से हो, इसके पड़ाव पारिवारिक, सामाजिक सम्बन्धों से होते हुए आदर्श राजनीतिक व्यवस्था तक पहुंचते हैं। राजा राम भी अपने आदर्श राज्य में प्रजा के विचारों को मन से मान देते हैं। उनका यह कहना कि "जौ अनीति कछु भाषौ भाई । तौ मोहि बरजहु भय बिसराई।" यानी यदि मेरे जीवन में, मेरी वाणी में, मेरे चरित्र में, कही नीति के विरूद्ध आचरण हो तो आप लोग भय छोड़ करके मुझे रोक दीजियेगा। नीति और सदाचार से जुड़ी यह बात आज भी रेखांकित करने योग्य है। आमजन से बिना लोभ और भय के विवेकपूर्ण सोच रखने का यह आग्रह समग्र समाज के नागरिकों के अन्तःकरण में एक भावबोध जगाता है। यह विवेकशील सोच राष्ट्र, समाज और परिवार सभी को सकारात्मक रूप से आगे बढ़ाने वाली है।

जीवन में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। परिवारजनों के सम्बन्धों में भी टूटन आ जाती है। कभी स्वार्थ के चलते सोच के सिरे अलग हो जाते हैं तो कभी मिथ्या धारणाएँ उलझनें बढ़ाती हैं। श्रीरामचरितमानस में भी परिजनों के मन की बहुत सी उलझनों की व्याख्या की गई है, परंतु परिवार के सदस्यों के परस्पर संबंधों की गरिमा और मर्यादा सदा बनी रहती है। तभी तो मानस में मान और ममत्व से भरे एक सुंदर प्रसंग का उल्लेख यूं भी हुआ है -

प्रभु जानी कैकई लजानी।

प्रथम तासु गृह गए भवानी।

माता कैकई के कारण ही श्रीराम को वनवास भोगना पड़ा तथापि अयोध्या लौटने पर वे सबसे पहले माता कैकई के महल में ही गए। यह अनुभवगम्य और व्यावहारिक-सा उदार व्यवहार आज टूटते-बिखरते परिवारों को बचा सकता है। आपसी प्रेम और सम्मान की संपदा सुरक्षित रहे तो मन का जुड़ाव भी बना रहता है।सम्बन्धों में अंतराल बना लेने के स्थान पर साथ बैठ सार्थक संवाद करना ही इस स्नेह का दृढ़ आधार बनता है। इस मोर्चे पर भी प्रभु राम के अनुकरणीय व्यक्तित्व को गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा वर्णित भाव यों समेटे हैं -

सुनी सन्मानहिं सबहिं सुबानी।

भनिति भगति नति गति पहिचानी।

अर्थात् सबकी सुनकर और उनकी वाणी, भक्ति, विनय और चाल को पहचानकर सुंदर वाणी से सबका यथायोग्य सम्मान करते हैं। यह एक जननायक का ही नहीं, परिवार के दायित्व भाव से जुड़े व्यक्ति का भी सबसे मूल्यवान गुण होता है।

आज के भौतिक जीवन में जहां कलह, आक्रोश, क्रोध, अपराधबोध, प्रतिस्पर्धा और मान-अपमान की स्थितियाँ हर ओर बनी हुई हैं, अनगिनत संघर्षों से जूझते हुए अपने शब्दों और कर्मों को साधता राम का जीवन शांति-सामंजस्य की अनमोल सीख देता है। उनका स्मरण आशा और विश्वास को पोसने वाला है। गोस्वामीजी वनवासियों से भी कहलवाया है कि -

जब तें हम प्रभु पदुम निहारे।

मिटे दुःसह दुख दोष हमारे।

बचन सुनत पुरजन अनुरागे।

तिन्ह के भाग सराहन लागे |'

यानी जब से प्रभु के चरण कमल देखे, तब से हमारे दुःसह दुःख और दोष मिट गए। वनवासियों के वचन सुनकर अयोध्या के लोग प्रेम में भर गए और उनके भाग्य की सराहना करने लगे। सचमुच, प्रेमपगा मन और कठिन से कठिन परिस्थितियों में धैर्य धारण करने वाले राम के लिए समग्र संसार ही परिवार के समान था और समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपना परिजन।

ध्यातव्य है कि एक आम-सा नागरिक केवट वनवास जाते प्रभु राम से अधिकारपूर्वक कहता है कि - 'जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पद पदुम पखारन कहहू।' राम केवट की चतुराई समझते हैं, किंतु तब भी उसके निश्छल भाव को देखते हुए उसे इच्छापूर्ति करने की अनुमति दे देते हैं। वनवास के दौरान उन्हें सरयू नदी पार करवाने के बाद उतराई लेने से मना करने और जीवन से तर जाने की आशा का भाव कितना सुंदर है! जगत नियंता से दूरी नहीं अपनेपन का भाव वसुधैव कुटुम्बकम को सार्थक करता प्रतीत होता है। हिंसा, अराजकता और अविश्वास के वर्तमान समय में यह संवाद सचमुच प्रासंगिक है।

पारिवारिक सम्बन्धों की समरसता से उपजी मानसिक, वैचारिक और व्यावहारिक श्रेष्ठता के बिना संवेदनशील समाज का निर्माण संभव नहीं है । समग्र लोक में समाहित सामाजिक संवेदनाओं का यह रंग राम के वनगमन को निकलते ही दिखने लगता है।राम, लक्ष्मण और जानकी को वन में भटकता देखने पर गाँव की स्त्रियों का मन पीड़ा में डूब जाता है। व्यथा और अचरज में डूबा उनका प्रश्न देखिए कि - 'ते पितु मात कहहुँ सखि कैसे। जिन पठए वन बालक ऐसे।' यह मर्मस्पर्शी प्रसंग समाज के कितने सुंदर साझेपन को लिए है। लोक हृदय में रमी साझी वेदना, साझी चिंता। यहाँ अपने-पराये का अंतर ही कहाँ दिखता है ? साथ ही बात केवल बातों में चिंता जताने भर की नहीं स्वयं आगे बढ़कर सहायता करने सच्चरित्रता की भी है।

सीता लखन सहित रघुराई।

गाँव निकट जब निकसहि जाई।

सुनि सब बाल वृद्ध नर नारी।

चलहिं तुरत गृह काजु बिसारी।

ग्राम-वासी साझे समाज की रूपरेखा में जिस सहृदयता से राम, जानकी और लक्ष्मण की सेवा को आतुर होते हैं उसकी नींव घर-आँगन में बनती है। श्रीरामचरितमानस में निरूपित सामाजिक जीवन के इस आदर्श रूप का आधार परिवार ही है।

वर्तमान में भारत ही नहीं वैश्विक स्तर पर सुराज, सहअस्तित्व और सामाजिक समानता की बात होती है, तो मर्यादा पुरुषोत्तम राम के लोकहितकारी स्वरूप की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है । सांस्कृतिक सद्भावना, राष्ट्र कल्याण, धर्म और जनसेवा राम के आदर्श व्यक्तित्व के आधार स्तम्भ हैं। एक राजा के रूप में न केवल राजनैतिक क्षेत्र से जुड़े लोगों के लिए आदर्श स्वरूप माननीय है बल्कि परिवार के मोर्चे पर भी उनका जीवन जीवन नैतिक और स्वार्थ रहित व्यवहार अनुकरणीय है। विवेक और सदाचार की सीख उनके द्वारा अपने जीवन में लिए गए हर निर्णय में देखने को मिलती है ।उनके अलौकिक चरित्र में करुणा, शांति, एकता, प्रगति और संवेदना सब कुछ समाया है। दुखद है कि मानस में वर्णित जीवन दर्शन के बहुत से सार्थक भावों की भ्रामक व्याख्या भी गई। प्रगतिशील सोच के नाम पर परोसे गए पूर्वाग्रही विचारों ने वास्तविक अर्थ को भुला दिया। अत्यधिक त्रासद है कि सारा विमर्श 'ढोल गँवार शूद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।' तक समेट दिया गया। जबकि शुद्ध भावनात्मक बोध एवं लोकमंगल की सकारात्मक सोच से मन को जोड़ती मानस की बहुत सी चौपाइयाँ चमत्कृत करने वाली हैं। जिनमें राम एक आदर्श पुत्र, भाई, शासक और जन हितैषी छवि में दिखते हैं। राम राजा से कहीं अधिक समाज सुधारक के रूप में हमारे समक्ष होते हैं।

अशांति और अराजकता के वर्तमान समय में जब जड़ों की ओर लौटना और मानवीय मूल्यों को सहेजना सबसे अधिक आवश्यक प्रतीत हो रहा है, मानस में वर्णित मानवीय भाव हमें दिशा दे सकते हैं। दिशाहीन होते मन और जीवन को रामायण में समाहित परिवार बोध गरिमामयी मार्गदर्शन देने वाला है। राम राज्य की अवधारणा अराजक और हिंसक हो चले समाज में सभ्य वातावरण बना सकती है। इस मार्ग पर भगवान राम का चरित्र हमारे लिए पथ-प्रदर्शक बन सकता है। उनके चरित्र में समाहित सेवा, त्याग, सत्य और न्याय के भाव हमारे लौकिक व्यवहार और विचार को परिष्कृत कर सकते हैं।

डॉ मोनिका शर्मा

वरिष्ठ स्तंभकार

ईमेल - monikasharma.writing@gmail.com